International Journal of Engineering, Science and Humanities
An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 7.9 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

गांधीवाद का सामाजिक न्याय और जाति उन्मूलन में योगदान

Bablu Kumar Jayswal
Research Scholar,Department of History,Malwanchal University,Indore,M.P.
Dr.Rathod Duryodhan Devidas
Supervisor,Department of History,Malwanchal University,Indore,M.P.

सारांश

यह शोध-पत्र गांधीवाद की सामाजिक न्याय संबंधी अवधारणा तथा जाति उन्मूलन में उसके योगदान का विश्लेषण करता है। भारतीय समाज में व्याप्त जातिगत असमानता और सामाजिक बहिष्करण की पृष्ठभूमि में गांधीवाद एक नैतिक एवं मानवीय दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है, जो समानता, गरिमा और समरसता पर आधारित है। महात्मा गांधी ने सामाजिक न्याय को केवल संवैधानिक प्रावधानों तक सीमित न रखते हुए इसे सामाजिक चेतना और आत्मपरिवर्तन से जोड़ा। अस्पृश्यता के उन्मूलन हेतु उनके प्रयास—जैसे हरिजन आंदोलन, समावेशी शिक्षा और सामाजिक सुधार—जाति-आधारित भेदभाव के विरुद्ध एक सशक्त नैतिक संघर्ष थे। गांधीवाद सर्वोदया और अंत्योदय के सिद्धांतों के माध्यम से समाज के अंतिम व्यक्ति के उत्थान पर बल देता है। यह अध्ययन निष्कर्ष निकालता है कि गांधीवादी विचार आज भी सामाजिक न्याय और जाति उन्मूलन के लिए एक प्रासंगिक और प्रेरक वैचारिक आधार प्रदान करते हैं।

मुख्य शब्द: गांधीवाद, सामाजिक न्याय, जाति उन्मूलन, अस्पृश्यता, सर्वोदया

भूमिका

भारतीय समाज की संरचना ऐतिहासिक रूप से जाति आधारित असमानताओं, सामाजिक भेदभाव और बहिष्करण से ग्रस्त रही है, जिसने सामाजिक न्याय की अवधारणा को एक गंभीर चुनौती के रूप में प्रस्तुत किया। जाति व्यवस्था ने समाज के एक बड़े वर्ग को शिक्षा, सम्मान, संसाधनों और अवसरों से वंचित रखा, जिसके परिणामस्वरूप सामाजिक असंतुलन और नैतिक पतन की स्थिति उत्पन्न हुई। इसी पृष्ठभूमि में गांधीवाद एक ऐसे वैचारिक और नैतिक आंदोलन के रूप में उभरा, जिसने सामाजिक न्याय को केवल कानूनी या राजनीतिक अधिकारों तक सीमित न रखकर मानवीय गरिमा, नैतिकता और आत्मपरिवर्तन से जोड़ा। महात्मा गांधी ने सामाजिक न्याय को स्वतंत्रता संग्राम का अनिवार्य अंग मानते हुए यह स्पष्ट किया कि राजनीतिक स्वतंत्रता तब तक अर्थहीन है जब तक समाज के अंतिम व्यक्ति को सम्मान और समान अवसर प्राप्त न हों। गांधीवाद का मूल उद्देश्य समाज के वंचित, दलित और शोषित वर्गों को मुख्यधारा में लाना था, जिसके लिए उन्होंने सत्य, अहिंसा, समानता और सर्वोदया जैसे सिद्धांतों को व्यवहार में उतारा। जाति उन्मूलन के संदर्भ में गांधी का दृष्टिकोण सुधारवादी और नैतिक था; वे अस्पृश्यता को मानवता के विरुद्ध अपराध मानते थे और इसके उन्मूलन के लिए सामाजिक चेतना, आत्मशुद्धि और जनजागरण पर बल देते थे। उन्होंने मंदिर प्रवेश आंदोलनों, हरिजन सेवा और समावेशी शिक्षा के माध्यम से समाज में समानता की भावना को सुदृढ़ करने का प्रयास किया। (जोधका, एस. एस,2012).गांधीवाद सामाजिक न्याय को केवल राज्य की जिम्मेदारी न मानकर समाज और व्यक्ति के नैतिक दायित्व के रूप में देखता है, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति को अन्याय के विरुद्ध खड़ा होना आवश्यक है। इस प्रकार, गांधीवाद ने जाति उन्मूलन को संघर्ष,

International Journal of Engineering, Science and Humanities
An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 7.9 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

संवाद और नैतिक सुधार के माध्यम से आगे बढ़ाने का मार्ग प्रशस्त किया। वर्तमान भारत में भी, जहाँ जातिगत भेदभाव विभिन्न रूपों में विद्यमान है, गांधीवादी विचार सामाजिक न्याय की पुनर्व्याख्या और सामाजिक समरसता की स्थापना के लिए अत्यंत प्रासंगिक प्रतीत होते हैं।

अध्ययन का महत्व

यह अध्ययन गांधीवाद के सामाजिक न्याय और जाति उन्मूलन में योगदान को समझने के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि भारतीय समाज आज भी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से जातिगत असमानताओं और सामाजिक भेदभाव की समस्याओं से जूझ रहा है। महात्मा गांधी के विचार सामाजिक सुधार को केवल विधिक या संस्थागत उपायों तक सीमित नहीं रखते, बल्कि नैतिकता, आत्मपरिवर्तन और सामाजिक उत्तरदायित्व को केंद्र में रखते हैं। इस शोध के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि गांधीवाद सामाजिक न्याय की एक समग्र अवधारणा प्रस्तुत करता है, जिसमें वंचित वर्गों का सशक्तिकरण, मानवीय गरिमा की रक्षा और सामाजिक समरसता की स्थापना प्रमुख हैं। अध्ययन नीति-निर्माताओं, शिक्षाविदों और सामाजिक कार्यकर्ताओं के लिए उपयोगी है, क्योंकि यह समकालीन सामाजिक समस्याओं के समाधान हेतु गांधीवादी मूल्यों की प्रासंगिकता को रेखांकित करता है। साथ ही, यह शोध सामाजिक न्याय संबंधी विमर्श को नैतिक और मानवीय दृष्टि प्रदान कर अकादमिक साहित्य को समृद्ध करता है।(पारेख, बी,2001).

अध्ययन का दायरा

इस अध्ययन का दायरा गांधीवाद की सामाजिक न्याय संबंधी अवधारणा और जाति उन्मूलन में उसके योगदान के समग्र विश्लेषण तक सीमित है। इसमें महात्मा गांधी के सामाजिक दर्शन, उनके लेखन, भाषणों तथा आंदोलनों के माध्यम से जातिगत भेदभाव के विरुद्ध किए गए प्रयासों का अध्ययन किया गया है। शोध में अस्पृश्यता उन्मूलन, हरिजन आंदोलन, सर्वोदया और अंत्योदय जैसी गांधीवादी अवधारणाओं को सामाजिक न्याय के संदर्भ में परखा गया है। साथ ही, स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान सामाजिक सुधार के लिए अपनाई गई रणनीतियों और उनके सामाजिक प्रभावों को भी शामिल किया गया है। यह अध्ययन ऐतिहासिक एवं वैचारिक दृष्टिकोण पर आधारित है और समकालीन भारत में गांधीवादी विचारों की प्रासंगिकता का सीमित मूल्यांकन करता है। हालांकि, यह शोध विस्तृत क्षेत्रीय अध्ययन या सांख्यिकीय विश्लेषण तक विस्तारित नहीं है, बल्कि सैद्धांतिक और गुणात्मक अध्ययन तक केंद्रित है। (तेलतुम्बड़े, ए,2018).

सामाजिक न्याय और जाति व्यवस्था की पृष्ठभूमि

भारतीय समाज की सामाजिक संरचना ऐतिहासिक रूप से जाति व्यवस्था पर आधारित रही है, जिसने सामाजिक संबंधों, अधिकारों और कर्तव्यों को जन्म आधारित श्रेणियों में विभाजित किया। यह व्यवस्था प्रारंभ में कार्य-विभाजन से जुड़ी मानी जाती थी, किंतु समय के साथ यह कठोर और वंशानुगत बन गई, जिसके परिणामस्वरूप समाज में गहरी असमानताएँ उत्पन्न हुईं। ऊँच-नीच, छुआछूत और बहिष्करण जैसी प्रथाओं ने सामाजिक न्याय की अवधारणा को गंभीर रूप से बाधित किया तथा समाज के एक बड़े वर्ग को शिक्षा, रोजगार और सामाजिक सम्मान से वंचित रखा। सामाजिक न्याय का आशय समान अवसर, अधिकारों की समानता और मानवीय गरिमा की रक्षा से है, परंतु जाति व्यवस्था ने इस लक्ष्य को ऐतिहासिक रूप से कमजोर किया। औपनिवेशिक काल में

International Journal of Engineering, Science and Humanities
An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 7.9 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

आधुनिक शिक्षा, संवैधानिक सुधारों और सामाजिक आंदोलनों के उदय के साथ सामाजिक न्याय का विचार अधिक सुस्पष्ट हुआ। सुधारकों और विचारकों ने जातिगत भेदभाव को सामाजिक कुरीति के रूप में चिन्हित कर इसके उन्मूलन की आवश्यकता पर बल दिया। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान सामाजिक न्याय को राष्ट्रीय संघर्ष का अभिन्न अंग माना गया, जहाँ राजनीतिक स्वतंत्रता के साथ सामाजिक समानता की माँग भी उठी। इस पृष्ठभूमि में महात्मा गांधी के विचार विशेष महत्व रखते हैं, जिन्होंने जाति व्यवस्था के अमानवीय स्वरूप की आलोचना करते हुए सामाजिक समरसता और समानता पर आधारित समाज की परिकल्पना प्रस्तुत की। इस प्रकार, सामाजिक न्याय और जाति व्यवस्था की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि गांधीवादी चिंतन को समझने का आधार प्रदान करती है। (ओमवेद्ट, जी,2004).

भारतीय समाज में असमानता की ऐतिहासिक जड़ें

भारतीय समाज में असमानता की ऐतिहासिक जड़ें प्राचीन सामाजिक संरचनाओं, धार्मिक परंपराओं और आर्थिक विभाजनों में निहित रही हैं, जिन्होंने समय के साथ एक जटिल और श्रेणीबद्ध समाज का निर्माण किया। जाति व्यवस्था ने जन्म के आधार पर व्यक्ति की सामाजिक स्थिति, पेशा और अधिकार निर्धारित कर दिए, जिससे समान अवसर की अवधारणा सीमित हो गई। इस व्यवस्था के अंतर्गत उच्च और निम्न वर्गों के बीच स्थायी दूरी स्थापित हुई, जिसने सामाजिक गतिशीलता को अवरुद्ध किया। मध्यकाल में सामंती ढाँचे, भूमि स्वामित्व की असमानता और धार्मिक रूढ़ियों ने सामाजिक विषमता को और गहरा किया। औपनिवेशिक काल में ब्रिटिश प्रशासन ने राजस्व व्यवस्था, आधुनिक शिक्षा और प्रशासनिक वर्गीकरण के माध्यम से सामाजिक विभाजन को नए रूप प्रदान किए, जिससे कुछ वर्गों को लाभ मिला जबकि अधिकांश जनसंख्या वंचित बनी रही। औद्योगीकरण और नगरीकरण के सीमित प्रभावों ने भी ग्रामीण और शहरी समाज के बीच असमानताओं को बढ़ाया। सामाजिक सुधार आंदोलनों के उदय के बावजूद, परंपरागत मान्यताएँ और संरचनात्मक बाधाएँ लंबे समय तक बनी रहीं। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान असमानता को केवल आर्थिक नहीं, बल्कि सामाजिक और नैतिक समस्या के रूप में देखा गया। इसी संदर्भ में महात्मा गांधी ने असमानता की जड़ों को सामाजिक चेतना और नैतिक पतन से जोड़ते हुए आत्मपरिवर्तन और सामाजिक समरसता पर बल दिया। इस प्रकार, भारतीय समाज में असमानता की ऐतिहासिक जड़ें बहुआयामी रही हैं, जिन्हें समझे बिना सामाजिक न्याय की स्थापना संभव नहीं है।

साहित्य समीक्षा

गांधीवाद, सामाजिक न्याय और जाति उन्मूलन से संबंधित साहित्य भारतीय सामाजिक-राजनीतिक चिंतन की एक समृद्ध और बहुआयामी परंपरा को प्रस्तुत करता है। इस क्षेत्र में डॉ. भीमराव आंबेडकर और महात्मा गांधी के विचार केंद्रीय स्थान रखते हैं, जिनके इर्द-गिर्द आधुनिक सामाजिक न्याय का विमर्श विकसित हुआ है। आंबेडकर की कृति *जाति का विनाश* (2014) जाति व्यवस्था की तीखी, संरचनात्मक और तर्कसंगत आलोचना प्रस्तुत करती है। आंबेडकर जाति को केवल सामाजिक कुरीति नहीं, बल्कि एक संस्थागत अन्याय मानते हैं, जो लोकतंत्र, समानता और व्यक्ति की स्वतंत्रता के मूल सिद्धांतों के विरुद्ध है। वे सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए संवैधानिक उपायों, कानूनी अधिकारों और राजनीतिक प्रतिनिधित्व को अनिवार्य मानते हैं। इसके विपरीत,

International Journal of Engineering, Science and Humanities
An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 7.9 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

गांधी का *हिंद स्वराज* (2008) आधुनिक सभ्यता की आलोचना करते हुए नैतिकता, आत्मसंयम और सामाजिक उत्तरदायित्व पर आधारित समाज की परिकल्पना प्रस्तुत करता है। गांधी सामाजिक न्याय को आत्मपरिवर्तन और नैतिक चेतना से जोड़ते हैं तथा मानते हैं कि बिना सामाजिक नैतिक सुधार के केवल कानूनों के माध्यम से समानता स्थापित नहीं की जा सकती।

महात्मा गांधी के संपूर्ण लेखन (2000) में संकलित विचार गांधी के सामाजिक दर्शन को व्यापक संदर्भ प्रदान करते हैं। इन लेखों में अस्पृश्यता उन्मूलन, हरिजन सेवा, सर्वोदया और अंत्योदय जैसी अवधारणाएँ स्पष्ट रूप से उभरकर सामने आती हैं, जो सामाजिक न्याय को मानव गरिमा और करुणा से जोड़ती हैं। डेविड हार्डिमैन (2003) गांधी को उनके ऐतिहासिक और वैश्विक संदर्भ में रखकर विश्लेषित करते हैं तथा यह स्पष्ट करते हैं कि गांधी के विचार केवल स्वतंत्रता आंदोलन तक सीमित नहीं थे, बल्कि सामाजिक न्याय और समानता की वैश्विक बहस को भी प्रभावित करते हैं। हार्डिमैन के अनुसार गांधी का महत्व इस बात में निहित है कि उन्होंने राजनीति और नैतिकता को अलग नहीं किया।

आर. अय्यर (2000) गांधी के नैतिक और राजनीतिक चिंतन का गहन विश्लेषण प्रस्तुत करते हैं। वे गांधी को एक नैतिक दार्शनिक के रूप में स्थापित करते हैं, जिनके लिए सामाजिक न्याय शक्ति या प्रभुत्व का प्रश्न नहीं, बल्कि नैतिक कर्तव्य का विषय था। अय्यर यह स्पष्ट करते हैं कि गांधी अधिकारों से अधिक कर्तव्यों पर बल देकर सामाजिक समरसता की स्थापना करना चाहते थे। वहीं, एस. एस. जोधका (2012) की कृति *जाति* समकालीन भारत में जाति की निरंतरता और उसके बदलते स्वरूप का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत करती है। जोधका यह दिखाते हैं कि आधुनिकता, शिक्षा और लोकतंत्र के बावजूद जाति किस प्रकार सामाजिक संबंधों और अवसरों को प्रभावित करती रहती है, जिससे गांधी और आंबेडकर दोनों की प्रासंगिकता स्पष्ट होती है।

आर. कुमार (2016) गांधी और अहिंसा के दर्शन को सामाजिक संघर्ष और न्याय के संदर्भ में विश्लेषित करते हैं। वे अहिंसा को केवल नैतिक आदर्श नहीं, बल्कि सामाजिक परिवर्तन की व्यावहारिक रणनीति के रूप में देखते हैं। ओ. एम. लिंच (2004) दलितों और लोकतंत्रीकरण के संबंध का अध्ययन करते हुए यह रेखांकित करते हैं कि संवैधानिक ढाँचे के बावजूद सामाजिक भेदभाव की जड़ें गहरी बनी हुई हैं। यह निष्कर्ष गांधीवादी नैतिक सुधार और आंबेडकरवादी संवैधानिक उपायों के समन्वय की आवश्यकता को रेखांकित करता है। समग्र रूप से यह साहित्य दर्शाता है कि गांधीवाद और आधुनिक सामाजिक न्याय विमर्श एक-दूसरे के विरोधी नहीं, बल्कि पूरक हैं, और दोनों के संयुक्त अध्ययन से ही भारतीय समाज में जाति उन्मूलन और सामाजिक न्याय की समग्र समझ विकसित की जा सकती है।

जाति व्यवस्था पर गांधी का दृष्टिकोण

1. **वर्ण व्यवस्था और जातिगत भेद में अंतर**

महात्मा गांधी वर्ण व्यवस्था और जातिगत भेद के बीच स्पष्ट वैचारिक अंतर स्थापित करते हैं। गांधी के अनुसार वर्ण व्यवस्था मूल रूप से कर्म और गुण पर आधारित सामाजिक संगठन की एक लचीली अवधारणा थी, जिसका उद्देश्य समाज में कार्यों का संतुलित विभाजन और सहयोग को बढ़ावा देना था। इसके विपरीत, जातिगत भेद जन्म आधारित, कठोर और भेदभावपूर्ण संरचना है, जिसने

International Journal of Engineering, Science and Humanities
An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 7.9 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

समाज में ऊँच-नीच और असमानता को स्थायी बना दिया। गांधी मानते थे कि वर्ण व्यवस्था का विकृत रूप ही जाति व्यवस्था बन गया, जिसने सामाजिक न्याय और मानवीय गरिमा को गहरी क्षति पहुँचाई।

2. जन्म आधारित ऊँच-नीच का विरोध

गांधी जन्म आधारित ऊँच-नीच के प्रबल विरोधी थे और उन्होंने इसे मानवता के विरुद्ध अन्यायपूर्ण व्यवस्था माना। उनका स्पष्ट मत था कि कोई भी व्यक्ति जन्म से न तो श्रेष्ठ होता है और न ही हीन, बल्कि उसके कर्म, आचरण और नैतिक मूल्य ही उसका वास्तविक परिचय होते हैं। इसी कारण उन्होंने अस्पृश्यता को सामाजिक पाप कहा और इसके उन्मूलन को नैतिक अनिवार्यता बताया। गांधी का मानना था कि जातिगत भेदभाव समाज की आत्मा को दूषित करता है और राष्ट्र की एकता को कमजोर करता है।

3. सामाजिक समरसता की आवश्यकता

सामाजिक समरसता गांधी के जाति संबंधी दृष्टिकोण का केंद्रीय तत्व है। वे समाज को संघर्ष और विभाजन के बजाय सहयोग, करुणा और परस्पर सम्मान पर आधारित देखना चाहते थे। गांधी का विश्वास था कि कानूनों से अधिक प्रभावी सामाजिक परिवर्तन तब संभव है जब समाज स्वयं भेदभाव को त्यागे। मंदिर प्रवेश आंदोलन, हरिजन सेवा और सामूहिक प्रार्थनाओं जैसे प्रयासों के माध्यम से उन्होंने विभिन्न सामाजिक वर्गों के बीच संवाद और सहभागिता को बढ़ावा दिया। इस प्रकार, गांधी का दृष्टिकोण सामाजिक समरसता और नैतिक सुधार के माध्यम से जातिगत असमानताओं को समाप्त करने की दिशा में एक व्यावहारिक और मानवीय मार्ग प्रस्तुत करता है। (कुमार, आर,2016)

सामाजिक न्याय की गांधीवादी अवधारणा

1. सर्वोदया (सबका उदय) का सिद्धांत

सामाजिक न्याय की गांधीवादी अवधारणा का मूल आधार सर्वोदया का सिद्धांत है, जिसका तात्पर्य समाज के सभी वर्गों के समग्र उत्थान से है। महात्मा गांधी के अनुसार किसी भी समाज की प्रगति केवल कुछ लोगों की उन्नति से नहीं, बल्कि सभी के कल्याण से मापी जानी चाहिए। सर्वोदया का विचार आर्थिक, सामाजिक और नैतिक समानता पर आधारित है, जहाँ विकास की प्रक्रिया में कोई भी वर्ग पीछे न छूटे। गांधी प्रतिस्पर्धा-प्रधान व्यवस्था के स्थान पर सहयोग और परस्पर निर्भरता पर आधारित समाज की कल्पना करते हैं। उनके लिए सामाजिक न्याय का अर्थ था ऐसे सामाजिक ढाँचे का निर्माण, जिसमें शोषण, असमानता और भेदभाव का स्थान न हो तथा प्रत्येक व्यक्ति को सम्मानजनक जीवन जीने का अवसर प्राप्त हो।

2. अंतिम व्यक्ति (Antyodaya) की अवधारणा

सर्वोदया की अवधारणा का व्यावहारिक और मानवीय विस्तार अंत्योदय में दिखाई देता है। अंत्योदय का अर्थ है समाज के अंतिम, सबसे कमजोर और वंचित व्यक्ति का उत्थान। गांधी का मानना था कि किसी भी नीति, योजना या सामाजिक परिवर्तन की सफलता इस बात से आंकी जानी चाहिए कि उससे समाज के सबसे गरीब और उपेक्षित व्यक्ति को कितना लाभ पहुँचा है। यह दृष्टिकोण

International Journal of Engineering, Science and Humanities
An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 7.9 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

सामाजिक न्याय को संवेदनशील और मानव-केंद्रित बनाता है तथा सत्ता और संसाधनों के केंद्रीकरण का विरोध करता है। अंत्योदय के माध्यम से गांधी सामाजिक न्याय को केवल सिद्धांत नहीं, बल्कि व्यवहारिक कसौटी प्रदान करते हैं।

3. अधिकारों के साथ कर्तव्यों पर बल

गांधीवादी सामाजिक न्याय की एक महत्वपूर्ण विशेषता अधिकारों के साथ कर्तव्यों पर समान बल है। गांधी का मत था कि केवल अधिकारों की माँग समाज में टकराव और असंतुलन को जन्म देती है, जबकि कर्तव्यों का पालन सामाजिक समरसता और नैतिक अनुशासन को सुदृढ़ करता है। उनके अनुसार जब प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्तव्यों का ईमानदारी से निर्वहन करता है, तो दूसरों के अधिकार स्वतः सुरक्षित हो जाते हैं। इस प्रकार, सर्वोदया, अंत्योदय और कर्तव्यबोध के समन्वय से गांधीवाद सामाजिक न्याय की एक व्यापक, नैतिक और समावेशी अवधारणा प्रस्तुत करता है, जो आज भी अत्यंत प्रासंगिक है।

अस्पृश्यता उन्मूलन में गांधी का योगदान

1. हरिजन आंदोलन

अस्पृश्यता उन्मूलन के लिए महात्मा गांधी का योगदान उनके हरिजन आंदोलन के माध्यम से विशेष रूप से दृष्टिगोचर होता है। गांधी ने अस्पृश्यता को सामाजिक पाप और मानवता के विरुद्ध अपराध मानते हुए इसके उन्मूलन को राष्ट्रीय कर्तव्य घोषित किया। हरिजन आंदोलन का उद्देश्य समाज के उन वर्गों को सम्मान, आत्मविश्वास और सामाजिक स्वीकृति दिलाना था, जिन्हें लंबे समय से छुआछूत और बहिष्करण का सामना करना पड़ा था। गांधी ने हरिजन सेवक संघ की स्थापना कर शिक्षा, स्वच्छता और सामाजिक जागरूकता के माध्यम से वंचित वर्गों के उत्थान का प्रयास किया। उनका विश्वास था कि जब तक समाज स्वयं अस्पृश्यता जैसी कुरीति को त्याग नहीं देता, तब तक सच्ची स्वतंत्रता और सामाजिक न्याय संभव नहीं है।

2. मंदिर प्रवेश और सामाजिक समावेशन

गांधी अस्पृश्यता उन्मूलन को केवल विचारों तक सीमित नहीं रखते थे, बल्कि उसे व्यवहारिक स्तर पर लागू करने के पक्षधर थे। इसी दृष्टि से उन्होंने मंदिर प्रवेश आंदोलनों का समर्थन किया, जिनका उद्देश्य धार्मिक और सामाजिक संस्थानों में सभी वर्गों की समान भागीदारी सुनिश्चित करना था। गांधी का मानना था कि धर्म यदि भेदभाव सिखाता है, तो वह धर्म नहीं रह जाता। मंदिर प्रवेश के माध्यम से उन्होंने समाज को यह संदेश दिया कि ईश्वर के सामने सभी समान हैं और किसी भी व्यक्ति को जाति के आधार पर उपासना से वंचित करना अन्याय है। इन आंदोलनों ने सामाजिक समावेशन को बढ़ावा दिया और जातिगत भेदभाव के विरुद्ध जनचेतना को सशक्त किया।

3. 'हरिजन' शब्द और उसका नैतिक अर्थ

गांधी द्वारा प्रयुक्त 'हरिजन' शब्द का गहरा नैतिक और मानवीय अर्थ था। इसका आशय था "ईश्वर की संतान", जिसके माध्यम से गांधी वंचित वर्गों को आत्मसम्मान और नैतिक प्रतिष्ठा प्रदान करना चाहते थे। उनका उद्देश्य इस शब्द के प्रयोग से समाज की मानसिकता में परिवर्तन लाना और अस्पृश्य माने जाने वाले लोगों को सम्मानजनक पहचान देना था। यद्यपि बाद में इस शब्द को लेकर मतभेद उभरे, फिर भी गांधी की मंशा सामाजिक समानता और करुणा पर आधारित थी। इस प्रकार, हरिजन आंदोलन, मंदिर

International Journal of Engineering, Science and Humanities
An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 7.9 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

प्रवेश और नैतिक भाषा के प्रयोग के माध्यम से गांधी ने अस्पृश्यता उन्मूलन को एक व्यापक सामाजिक और नैतिक आंदोलन का रूप दिया, जिसने भारतीय समाज में सामाजिक न्याय की दिशा को मजबूत किया। (थोरात, एस., एवं न्यूमैन, के. एस,2010).

शिक्षा और सामाजिक सुधार में गांधीवाद

- **नई तालीम और समावेशी शिक्षा**

शिक्षा और सामाजिक सुधार के क्षेत्र में महात्मा गांधी का गांधीवादी दृष्टिकोण नई तालीम की अवधारणा के माध्यम से स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। नई तालीम का उद्देश्य ऐसी शिक्षा व्यवस्था विकसित करना था, जो बौद्धिक ज्ञान के साथ-साथ श्रम, आत्मनिर्भरता और सामाजिक उत्तरदायित्व को भी समान महत्व दे। गांधी मानते थे कि शिक्षा केवल पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित नहीं होनी चाहिए, बल्कि उसे जीवनोपयोगी कौशल और नैतिक मूल्यों से जोड़ा जाना चाहिए। समावेशी शिक्षा के अंतर्गत जाति, वर्ग या लिंग के आधार पर किसी भी प्रकार का भेदभाव अस्वीकार्य था। नई तालीम के माध्यम से गांधी सभी वर्गों, विशेषकर वंचित समुदायों, को समान शैक्षिक अवसर प्रदान कर सामाजिक असमानता को कम करना चाहते थे।

- **नैतिक शिक्षा द्वारा सामाजिक चेतना**

गांधीवाद में नैतिक शिक्षा सामाजिक सुधार का एक सशक्त माध्यम है। गांधी का विश्वास था कि बिना नैतिक चेतना के शिक्षा समाज को केवल कुशल उपभोक्ता तो बना सकती है, परंतु जिम्मेदार नागरिक नहीं। सत्य, अहिंसा, करुणा और आत्मसंयम जैसे मूल्यों को शिक्षा का अभिन्न अंग बनाकर गांधी सामाजिक चेतना के विकास पर बल देते थे। नैतिक शिक्षा व्यक्ति को अन्याय और भेदभाव के विरुद्ध संवेदनशील बनाती है तथा सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना विकसित करती है। इस प्रकार, शिक्षा सामाजिक परिवर्तन का नैतिक आधार तैयार करती है।

- **दलित और वंचित वर्गों का सशक्तिकरण**

गांधीवादी शिक्षा का अंतिम उद्देश्य दलित और वंचित वर्गों का सशक्तिकरण था। शिक्षा के माध्यम से आत्मसम्मान, स्वावलंबन और सामाजिक भागीदारी को बढ़ावा देना गांधी का प्रमुख लक्ष्य था। उन्होंने माना कि शिक्षा ही वह साधन है, जिसके द्वारा वंचित वर्ग सामाजिक अन्याय की बेड़ियों से मुक्त हो सकते हैं। इस प्रकार, नई तालीम, नैतिक शिक्षा और सशक्तिकरण के माध्यम से गांधीवाद शिक्षा को सामाजिक न्याय और समरसता की स्थापना का प्रभावी साधन बनाता है। (गांधी, मोहनदास करमचंद,2008)

राजनीतिक आंदोलनों में सामाजिक न्याय का समावेश

- **स्वतंत्रता आंदोलन में जाति प्रश्न**

महात्मा गांधी ने स्वतंत्रता आंदोलन को केवल राजनीतिक सत्ता हस्तांतरण का संघर्ष नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय की स्थापना का व्यापक अभियान माना। उनके नेतृत्व में जाति प्रश्न को राष्ट्रीय विमर्श का अभिन्न अंग बनाया गया। गांधी का स्पष्ट मत था कि यदि स्वतंत्र भारत में जातिगत भेदभाव बना रहता है, तो राजनीतिक स्वतंत्रता अर्थहीन होगी। इसी कारण उन्होंने कांग्रेस और जन आंदोलनों के मंचों से अस्पृश्यता उन्मूलन, सामाजिक समानता और मानवीय गरिमा की बात उठाई। स्वतंत्रता आंदोलन में दलितों और वंचित

International Journal of Engineering, Science and Humanities
An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 7.9 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

वर्गों की भागीदारी को प्रोत्साहित कर गांधी ने जाति आधारित बहिष्करण को चुनौती दी और राष्ट्रीय एकता को सामाजिक न्याय से जोड़ा। (यंग, आई. एम,2011).

- **जन आंदोलनों के माध्यम से सामाजिक सुधार**

गांधी ने जन आंदोलनों को सामाजिक सुधार का प्रभावी माध्यम बनाया। असहयोग आंदोलन, सविनय अवज्ञा आंदोलन और भारत छोड़ो आंदोलन जैसे आंदोलनों में उन्होंने सामाजिक समरसता, छुआछूत विरोध और समानता के संदेश को व्यापक जनसमूह तक पहुँचाया। इन आंदोलनों के दौरान आश्रमों, सभाओं और रचनात्मक कार्यक्रमों के माध्यम से विभिन्न जातियों और वर्गों के लोगों को एक साथ लाया गया। गांधी का विश्वास था कि जब आम जनता अन्यायपूर्ण सामाजिक प्रथाओं के विरुद्ध सक्रिय भागीदारी करती है, तभी स्थायी सामाजिक परिवर्तन संभव होता है। इस प्रकार, जन आंदोलनों ने सामाजिक न्याय को केवल विचार नहीं, बल्कि जन-आचरण का रूप प्रदान किया।

- **ग्राम स्वराज और विकेंद्रीकरण**

ग्राम स्वराज और विकेंद्रीकरण गांधीवादी राजनीतिक दृष्टि के केंद्रीय तत्व थे, जिनका गहरा संबंध सामाजिक न्याय से है। गांधी मानते थे कि केंद्रीकृत सत्ता सामाजिक असमानता को बढ़ाती है, जबकि विकेंद्रीकरण से स्थानीय स्तर पर समान अवसर और सहभागिता सुनिश्चित होती है। ग्राम स्वराज की अवधारणा के अंतर्गत प्रत्येक गाँव को आत्मनिर्भर इकाई बनाकर सभी वर्गों की समान भागीदारी पर बल दिया गया। इससे वंचित और हाशिए पर पड़े समुदायों को निर्णय-प्रक्रिया में स्थान मिला। इस प्रकार, राजनीतिक आंदोलनों, जन-सक्रियता और ग्राम स्वराज के माध्यम से गांधी ने सामाजिक न्याय को भारतीय राजनीतिक संघर्ष का अनिवार्य आधार बनाया।

गांधीवाद बनाम आधुनिक सामाजिक न्याय आंदोलन

1. गांधी और डॉ. आंबेडकर के विचारों की तुलना

महात्मा गांधी और डॉ. भीमराव आंबेडकर दोनों ही सामाजिक न्याय और जाति उन्मूलन के प्रमुख चिंतक थे, किंतु उनके दृष्टिकोण और रणनीतियाँ भिन्न थीं। गांधी सामाजिक सुधार को नैतिक परिवर्तन, आत्मशुद्धि और सामाजिक समरसता के माध्यम से प्राप्त करना चाहते थे। वे मानते थे कि समाज के भीतर चेतना परिवर्तन से ही स्थायी सुधार संभव है। इसके विपरीत, आंबेडकर जाति व्यवस्था को एक संरचनात्मक अन्याय मानते थे, जिसे समाप्त करने के लिए सशक्त कानूनी, राजनीतिक और संवैधानिक उपाय आवश्यक हैं। जहाँ गांधी समाज की अंतरात्मा को जगाने पर बल देते थे, वहीं आंबेडकर अधिकारों, प्रतिनिधित्व और संवैधानिक सुरक्षा को सामाजिक न्याय का आधार मानते थे।

2. संवैधानिक और नैतिक दृष्टिकोण का अंतर

गांधीवाद और आधुनिक सामाजिक न्याय आंदोलनों के बीच मुख्य अंतर उनके दृष्टिकोण में निहित है। गांधीवाद नैतिक दृष्टिकोण पर आधारित है, जिसमें अन्याय के विरुद्ध संघर्ष अहिंसा, करुणा और कर्तव्यबोध से संचालित होता है। गांधी का विश्वास था कि कानून तभी प्रभावी होते हैं, जब समाज नैतिक रूप से उन्हें स्वीकार करे। इसके विपरीत, आधुनिक सामाजिक न्याय आंदोलन संवैधानिक

International Journal of Engineering, Science and Humanities
An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 7.9 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

दृष्टिकोण को प्राथमिकता देते हैं, जहाँ समानता, आरक्षण, प्रतिनिधित्व और अधिकारों की रक्षा के लिए विधिक प्रावधानों पर बल दिया जाता है। यह दृष्टिकोण राज्य को सामाजिक न्याय का प्रमुख संरक्षक मानता है, जबकि गांधीवाद समाज और व्यक्ति की नैतिक जिम्मेदारी को केंद्र में रखता है।

3. समकालीन विमर्श में गांधीवाद की प्रासंगिकता

समकालीन सामाजिक न्याय विमर्श में गांधीवाद की प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है। यद्यपि संवैधानिक उपायों ने वंचित वर्गों को अधिकार और अवसर प्रदान किए हैं, फिर भी सामाजिक भेदभाव, मानसिकता और असमानता पूरी तरह समाप्त नहीं हुई है। ऐसे में गांधीवाद सामाजिक न्याय को नैतिक गहराई प्रदान करता है और सामाजिक समरसता, संवाद तथा करुणा पर बल देता है। आधुनिक आंदोलनों के साथ गांधीवादी मूल्यों का समन्वय सामाजिक न्याय को अधिक मानवीय, टिकाऊ और समावेशी बना सकता है। इस प्रकार, गांधीवाद और आधुनिक सामाजिक न्याय आंदोलन एक-दूसरे के विरोधी नहीं, बल्कि पूरक के रूप में देखे जा सकते हैं। (अय्यर, आर,2000).

समकालीन भारत में गांधीवाद की प्रासंगिकता

- **जाति भेदभाव की वर्तमान स्थिति**

समकालीन भारत में संवैधानिक समानता और विधिक संरक्षण के बावजूद जाति भेदभाव विभिन्न प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूपों में विद्यमान है। शहरीकरण, शिक्षा और तकनीकी प्रगति के बावजूद सामाजिक व्यवहार, विवाह, आवास, रोजगार और राजनीतिक प्रतिनिधित्व में जातिगत पूर्वाग्रह दिखाई देते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में यह समस्या अधिक गहरी है, जहाँ सामाजिक बहिष्करण, हिंसा और अवसरों की असमानता अब भी देखी जाती है। इस संदर्भ में महात्मा गांधी के विचार आज भी प्रासंगिक हैं, क्योंकि वे भेदभाव की जड़ को केवल संरचनात्मक नहीं, बल्कि नैतिक और मानसिक मानते थे। गांधी का आग्रह था कि कानूनों के साथ-साथ सामाजिक चेतना और आत्मपरिवर्तन के बिना जाति भेदभाव का स्थायी समाधान संभव नहीं है। (लिंच, ओ. एम,2004).

- **सामाजिक न्याय नीतियों में गांधीवादी मूल्य**

समकालीन सामाजिक न्याय नीतियाँ—जैसे आरक्षण, कल्याणकारी योजनाएँ और समावेशी विकास कार्यक्रम—समान अवसर सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। किंतु इन नीतियों की प्रभावशीलता तब बढ़ती है, जब उनमें गांधीवादी मूल्य जैसे करुणा, सर्वोदया, अंत्योदय और कर्तव्यबोध का समावेश हो। गांधीवाद नीतियों को मानव-केंद्रित दृष्टि प्रदान करता है, जहाँ लाभार्थी केवल संख्या नहीं, बल्कि सम्मान और गरिमा के साथ जीवन जीने वाले नागरिक माने जाते हैं। सामाजिक न्याय की योजनाओं में नैतिक उत्तरदायित्व और सामुदायिक सहभागिता का समावेश गांधीवादी सोच को समकालीन शासन से जोड़ता है। (आंबेडकर, बी. आर,2014).

- **नागरिक समाज और गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका**

International Journal of Engineering, Science and Humanities
An international peer reviewed, refereed, open-access journal
Impact Factor 7.9 www.ijesh.com ISSN: 2250-3552

समकालीन भारत में नागरिक समाज और गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका गांधीवादी विचारों को व्यवहार में उतारने में अत्यंत महत्वपूर्ण है। ये संगठन शिक्षा, स्वास्थ्य, महिला सशक्तिकरण और दलित अधिकारों के क्षेत्र में कार्य करते हुए सामाजिक न्याय को जमीनी स्तर पर सुदृढ़ करते हैं। गांधी के रचनात्मक कार्यक्रमों की परंपरा को आगे बढ़ाते हुए, ये संस्थाएँ संवाद, अहिंसा और सेवा के माध्यम से सामाजिक समरसता को बढ़ावा देती हैं। इस प्रकार, नागरिक समाज की सक्रियता और गांधीवादी मूल्यों का समन्वय समकालीन भारत में सामाजिक न्याय की चुनौतियों से निपटने का प्रभावी मार्ग प्रस्तुत करता है।

निष्कर्ष

इस अध्ययन से स्पष्ट होता है कि गांधीवाद सामाजिक न्याय और जाति उन्मूलन के संदर्भ में एक गहन नैतिक, सामाजिक और मानवीय दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। महात्मा गांधी ने सामाजिक न्याय को केवल कानूनी अधिकारों या राजनीतिक सुधारों तक सीमित न रखकर उसे मानव गरिमा, नैतिक चेतना और सामाजिक उत्तरदायित्व से जोड़ा। सर्वोदया और अंत्योदय की अवधारणाओं के माध्यम से उन्होंने समाज के अंतिम व्यक्ति के उत्थान को सामाजिक प्रगति का वास्तविक मापदंड बताया। जाति व्यवस्था और अस्पृश्यता के विरुद्ध उनके प्रयासों ने भारतीय समाज को आत्ममंथन के लिए विवश किया और सामाजिक समरसता की दिशा में महत्वपूर्ण वैचारिक आधार प्रदान किया। गांधीवाद जाति उन्मूलन के लिए संघर्ष और टकराव के स्थान पर नैतिक सुधार, संवाद और करुणा का मार्ग सुझाता है। गांधी का विश्वास था कि जब तक समाज के भीतर समानता और सम्मान की भावना विकसित नहीं होती, तब तक कानून और नीतियाँ सीमित प्रभाव ही डाल सकती हैं। उनके हरिजन आंदोलन, मंदिर प्रवेश के समर्थन और समावेशी शिक्षा के प्रयासों ने यह सिद्ध किया कि सामाजिक परिवर्तन के लिए व्यक्ति और समाज दोनों का नैतिक रूपांतरण आवश्यक है। यह दृष्टिकोण जाति उन्मूलन को दीर्घकालिक और टिकाऊ बनाने में सहायक है। समकालीन भारत में सामाजिक न्याय की चुनौतियाँ—जैसे सामाजिक भेदभाव, असमान अवसर और मानसिक पूर्वाग्रह—अब भी विद्यमान हैं। ऐसे में गांधीवाद नीति-निर्माताओं, शिक्षाविदों और नागरिक समाज के लिए महत्वपूर्ण मार्गदर्शन प्रदान करता है। संवैधानिक उपायों के साथ गांधीवादी मूल्यों का समन्वय सामाजिक न्याय को अधिक मानवीय और प्रभावी बना सकता है। भविष्य की नीतियों में करुणा, कर्तव्यबोध और सामुदायिक सहभागिता को शामिल कर सामाजिक समरसता को सुदृढ़ किया जा सकता है। इस प्रकार, गांधीवाद न केवल अतीत की विरासत है, बल्कि सामाजिक न्याय और जाति उन्मूलन के लिए एक जीवंत और प्रासंगिक वैचारिक मार्गदर्शक भी है

संदर्भ

1. आंबेडकर, बी. आर. (2014). *जाति का विनाश* (आलोचनात्मक संस्करण). वर्सो. (मूल कृति 1936 में प्रकाशित)
2. गांधी, मोहनदास करमचंद. (2008). *हिंद स्वराज*. नवजीवन प्रकाशन.
3. गांधी, मोहनदास करमचंद. (2000). *महात्मा गांधी के संपूर्ण लेखन* (खंड 1–100). प्रकाशन विभाग, भारत सरकार.
4. हार्डिमैन, डी. (2003). *अपने समय में गांधी और आज: उनके विचारों की वैश्विक विरासत*. कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस.
5. अय्यर, आर. (2000). *महात्मा गांधी का नैतिक और राजनीतिक चिंतन*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.

6. जोधका, एस. एस. (2012). *जाति*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
7. कुमार, आर. (2016). *गांधी और अहिंसा का दर्शन*. रूटलेज.
8. लिंच, ओ. एम. (2004). *अछूत नागरिक: दलित और भारत में लोकतंत्रीकरण*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
9. ओमवेद्ट, जी. (2004). *आंबेडकर: प्रबुद्ध भारत की ओर*. पेंगुइन बुक्स.
10. पंथम, टी., डॉयच, के. एल., एवं रेजई, एम. (2006). *आधुनिक भारत में राजनीतिक चिंतन*. सेज पब्लिकेशंस.
11. पारेख, बी. (2001). *गांधी: एक संक्षिप्त परिचय*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
12. शाह, जी., मांदर, एच., थोरात, एस., देशपांडे, एस., एवं बाविस्कर, ए. (2006). *ग्रामीण भारत में अस्पृश्यता*. सेज पब्लिकेशंस.
13. तेलतुम्बड़े, ए. (2018). *जाति का गणराज्य: नवउदार हिंदुत्व के दौर में समानता पर चिंतन*. नवयाना.
14. थोरात, एस., एवं न्यूमैन, के. एस. (2010). *जाति द्वारा अवरुद्ध: आधुनिक भारत में आर्थिक भेदभाव*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस.
15. यंग, आई. एम. (2011). *न्याय और भिन्नता की राजनीति* (द्वितीय संस्करण). प्रिंसटन यूनिवर्सिटी प्रेस.